1
आयुर्वेद-परिचय

आयुर्वेद शब्द आयुः + वेद इन दो शब्दों के संयोग से बना है। इसकी निरुक्ति से इसका अर्थ होता है "**आयुषो वेदः**" अर्थात् जो आयु का वेद है। आयुर्वेद शब्द के अर्थ को समझने के लिए दोनों शब्दों को अलग-अलग समझना आवश्यक होगा। प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों ने आयु को इस प्रकार परिभाषित किया है-

शरीरेन्द्रिय सत्त्वामसंयसोगो धारि जीवितम्।
नित्यगश्चानुबन्धश्च पर्यायैरायुरुचयते।।

च.सू. 1/42

अर्थात् शरीर, इन्द्रिय (ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ) मन और आत्मा के संयोग को आयु कहते हैं। पञ्चमहाभूत विकारात्मक एवं आत्मा के योगायतन को शरीर कहा जाता है। ज्ञानेन्द्रियाँ-क्षोत्र-त्वचा-नेत्र-जिह्वा और घ्राण। कमेन्द्रियाँ- वाणी- हाथ-पैर-मलद्वार और मूत्रमार्ग हैं। मन उभयात्मक इन्द्रिय है। आत्मा ज्ञान का अधिकरण है।

'**चैतन्यानुवर्तनमायुः**' अर्थात् चैतन्य की स्थिति को आयु कहा जाता है। अमरकोष में जीवितकाल को आयु कहा है- "**आयुर्जीवितकालः**"।

आयु, धारि, जीवित, नित्यग और अनुबन्ध ये सभी आयु के पर्याय कहे गए हैं।

आयुर्वेद में दूसरा शब्द **वेद** है, जो विद् ज्ञाने धातु से बना है। इस धातु का प्रयोग चार अर्थों में होता है - ज्ञान, सत्ता, विचार और प्राप्ति अर्थात् जिसके द्वारा जाना जाये, (वेत्ति, ज्ञायते) जिससे अस्तित्व का बोध हो, (विद्यते, अस्ति),

जिससे आयु के विषय में विचार किया जाये, (विचार्यते, चिन्ते) जिससे आयु को प्राप्त किया जाये (विन्दते, लभ्यते)।

1.1 आयुर्वेद शब्द का अर्थ

आयु और वेद इन दोनों शब्दों को अलग-अलग जानकर आयुर्वेद शब्द का अर्थ जानना सरल हो जाता है। जिस शास्त्र में आयु का अस्तित्व हो, जिससे आयु का ज्ञान हो, जिसमें आयु सम्बन्धी विचार हो, जिससे आयु की प्राप्ति हो, उसे आयुर्वेद कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार कह सकते है कि जिस शास्त्र के द्वारा रोगियों का रोग दूर हो तथा प्राणियों का जीवन रोगरहित तथा दीर्घायु हो, वह आयुर्वेद है।

आयुर्वेद एक विज्ञान है तथा विज्ञान सार्वभौम होता है। उस पर किसी वर्ग विशेष का अधिकार नहीं होता है। अतः आयुर्वेद पर भी किसी वर्ग विशेष का अधिकार नहीं है।

'शाखा, विद्या, सूत्र, ज्ञान, शास्त्र, लक्षण और तन्त्र ये आयुर्वेद के पर्याय हैं-'

"तत्र आयुर्वेदः शाखा विद्या सूत्रं ज्ञानं शास्त्रं लक्षणं तन्त्रमित्यनर्थान्तरम्"। (च.सू. 30/31)

1.2 आयुर्वेद की परिभाषा

हितायु, अहितायु, सुखायु और दुःखायु इन चारों आयुओं का वर्णन जिस शास्त्र में है, वही आयुर्वेद है। आयुर्वेद सभी आयुवर्धक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी उपचारों तथा प्रयोगों की जानकारी देने में सक्षम है। आयुर्वेद न केवल शरीर-रचना व औषध-संरचना की जानकारी देता है, अपितु भोज्यों के सेवन, पथ्य सेवन अपथ्यपरिहार, जड़ी बूटियाँ, रस, धातुरस इत्यादि के समानता पूर्वक प्रयोग के द्वारा अनेकों असाधारण और असाध्य रोगों के उपचार का ज्ञान भी प्रदान करता है। आयुर्वेद हमें आयु संवर्धन, दीर्घायु, संरक्षण तथा भौतिकशरीर के पुनर्नवीकरण के लिए प्रभावशाली उपकरण भी बताता है।

चार आयुओं का वर्णन

1. हितायुः- उसकी आयु हितायु कहलाती है, जो सबका हित करने वाला हो, किसी दूसरे के धन का लोभी न हो, सत्यवादी व शान्तप्रकृति का हो, प्रत्येक

कार्य को सोच समझ कर करने वाला हो, सावधान रहने वाला, धर्म, अर्थ, और काम का बिना किसी विरोध के प्रयोग करता हो, पूज्य जनों की पूजा करता हो, ज्ञानवान् हो, शान्तिप्रधान हो, वृद्धजनों की सेवा करने वाला हो और स्मृति शाली हो।

2. अहितायुः- हितायु के गुणों से रहित अर्थात् विषमगुणों वाला अहितायु है।

3. सुखायुः- उसकी आयु सुखायु कहलाती है, जो शारीरिक और मानसिक रोगों से रहित हो, यौवन सम्पन्न हो, बल-वीर्य-यश-पराक्रम युक्त हो, शास्त्रों का ज्ञाता और व्यवहारज्ञ हो, प्रसन्न और सन्तुष्ट इन्द्रियों से युक्त, समृद्ध और विभिन्न प्रकार के उपभोगों से युक्त, जो प्रत्येक सफलता को प्राप्त करने वाला हो और अपनी इच्छानुसार विचार करने वाला हो।

4. दुःखायुः- सुखायु के गुणों से रहित अर्थात् विपरीत गुणों वाला दुःखायु है।

आयुर्वेद शास्त्र के द्वारा आयु के स्वरूप और उसकी रक्षा का ज्ञान होता है। हितकर आहार-विहार और आचरण करने से आयु में स्थिरता आ जाती है, अन्यथा अज्ञानतावश असावधानी करने और स्वास्थ्य के नियमों का पालन न करने से आयु का ह्रास होता है अर्थात् आयु के रक्षणीय साधनों का उपदेश भी आयुर्वेद द्वारा ही होता है।

1.3 आयुर्वेद का प्रयोजन

"प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणम्, आतुरस्य विकार-प्रश्नं च।" (च.सू. 30/26)

प्राचीन काल से ही सभी आचार्यों ने आयुर्वेद के दो प्रयोजनों को माना है, एक तो स्वस्थ पुरुषों के स्वास्थ्य की रक्षा करना और दूसरा रोगियों के रोगों का निवारण करना।

"स्वस्थातुरपरायणम्"

प्रथम उद्देश्य की पूर्ति हेतु दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या सद्वृत्त तथा त्रिविध उपस्तभों का पालन आयुर्वेद के अनुसार करना चाहिए। आचार्यों की यह मान्यता है कि इन उपायों द्वारा मानव शरीर को क्षेत्ररूपी और बीज रूपी व्याधि उत्पन्न

करने वाले जीवाणुओं से सुरक्षा की जा सकती है। रोग से ग्रसित हो जाने पर रोगी के रोग का निवारण आयुर्वेद के दूसरे प्रयोजन के अन्तर्गत आता है।

प्राचीन कालीन भारत में मनुष्य की पूर्ण आयु सौ वर्ष मानी जाती थी। प्राचीन शास्त्रों में यह कहा भी गया है– **'शतायुर्वै पुरुषः'**

इस तथ्य को चरकसंहिता में प्रमाणित और परिभाषित भी किया है–

वर्षशतं खलु आयुषः प्रमाणमस्मिन् काले।
सन्ति पुनः अधिकोनवर्ष शतजीविनो मनुष्याः।।

विमानस्थान अ. 8 च.सं.

मनुष्य की आयु सामान्यतः सौ वर्ष होती है। कुछ मनुष्य इससे कम और कुछ अधिक भी जीवित रहते हैं, परन्तु कालान्तर में जब शारीरिक और मानसिक रोगों के कारण जब मानव की आयु का मान घटने लगा तो अल्पायु के भयवश रोगों के निवारण व आयु के मान की रक्षा के लिए जिन उपायों को बताया गया उन संग्रहीत उपायों ने आयुर्वेद का रूप ले लिया। चिकित्सा विशेषज्ञ वाग्भट ने आयुर्वेद के प्रयोजन के विषय में लिखा है कि मानव जीवन के पुरुषार्थ चतुष्ट्य धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष आदि का साधन आयु है। अतः आयु चतुष्ट्य की इच्छा करने वाले को आयुर्वेद के उपदेशों का आदर करना चाहिए–

आयुकामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम्।
आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः।।

अष्टाङ्ग हृदयम् – 1.2

आयुर्वेद ही ऐसा शास्त्र है जो पुरुषार्थ चतुष्ट्य की प्राप्ति के मार्ग को प्रशस्त करता है। वह आरोग्यमय जीवन देता है, क्योंकि रोगी व्यक्ति न तो धार्मिक क्रियाएँ कर सकता है, न धनार्जन कर सकता है, न जीवन की सुख सुविधाओं का आनन्द ले सकता है, न मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है, उसका स्वयं का जीवन जीना ही कठिन हो जाता है, फिर वह पुरुषार्थों की प्राप्ति करने में समर्थ कैसे हो सकता है? परन्तु आयुर्वेद ऐसा शास्त्र है, जो इन पुरुषार्थों को प्राप्त करा सकता है। क्योंकि यह मानव को आरोग्यमय जीवन प्रदान करता है। नीरोग और स्वस्थ व्यक्ति ही अपनी इच्छा से इन पुरुषार्थों को प्राप्त कर सकता है।

आयुर्वेद जीवन का दान करने वाला शास्त्र है और जीवनदान से बढ़कर कोई दान नहीं होता– **'नहि जीवितदानाद्धि विशिष्यते'** (चरकसूत्र)। इसलिए आयुर्वेद

एक पुण्यतम वेद है। ऋग्वेद आदि परलोकहित साधक होने के कारण पुण्य वेद माने जाते हैं, परन्तु आयुर्वेद लोकहितसाधक के साथ-साथ परलोकहित साधक तथा आरोग्य को प्रदान करने के कारण महान् और धर्मसाधन के कारण पुण्यतम वेद माना गया है।

आयुर्वेद वेदविद् विद्वानों के द्वारा भी मान्य है-

तस्यायुषः पुण्यतमो वेदो वेदविदां मतः।
वक्ष्यते यन्मनुष्याणां लोकयोरुभयोर्हितम्।।

च.सू. 1/43

वेद-वेदाङ्गो का अध्ययन-अध्यापन या यज्ञादि का अनुष्ठान करने वाले विद्वान् जब अस्वस्थता को प्राप्त हो जाते है तो उनके सभी कार्य अवरुद्ध हो जाते हैं तो उन्हें आरोग्य लाभ के लिए किसी चिकित्सक की शरण में जाना पड़ता था, चिकित्सक के पास जाकर ही पुनः वे अपने कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए समर्थ हो पाते हैं। इस प्रकार सभी शास्त्रों का उपकारक होने के कारण आयुर्वेद को 'पुण्यतम वेद' कहा जा सकता है।